प्रसंगवश:

आलोक मेहता

बापू के आंगन में मुंह पर ताला

महात्मा गांधी की समाधि राजघाट निश्चित रूप से शांति और आजादी का प्रेरणास्थल है। हजारों लोग बापू को श्रद्धा-सुमन अर्पित करने आते हैं। सोमवार 7 मई को प्रख्यात समाजसेवी अरुणा रॉय और उनके कुछ सामाजिक कार्यकर्ता साथी बापू को नमन करने राजघाट पहुंचे। वे देश के लाखों असहाय बुजुर्गों को 1800 से 2000 रुपए प्रतिमाह पेंशन देने की मांग के लिए भारतीय संसद के किनारे जंतर-मंतर स्थल पर 5 दिन का धरना देने से पहले गरीबों के भगवान माने जाने वाले महापुरुष के आदर्शों की याद दिलाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने कोई दिखावटी राजनीतिक तैयारी नहीं की थी। अरुणा रॉय के सहयोगी बिना ताम-झाम, राजनीतिक इरादे और महत्वाकांक्षा के राजस्थान तथा कुछ अन्य इलाकों में ग्रामीण मजदूरों-किसानों के दुख-दर्द दूर करने, उनकी आवाज सत्ता के गलियारों तक पहुंचाने की कोशिशें वर्षों से कर रहे हैं। इस बार वे 'पेंशन परिषद' नामक संस्था की जायज मांगों का समर्थन करने निकले। इसके लिए दूर-दराज के गांवों से लगभग 50 कार्यकर्ता मोटरसाइकिल से राजघाट आए थे। अरुणा रॉय की टोली आदरणीय अण्णा हजारे की 'क्रांतिकारी' टीम या बाबा रामदेव की 'परिवर्तनवादी' तूफानी भक्त-मंडली की तरह आक्रामक तेवर लेकर भी नहीं आई थी। फिर भी राजघाट पर उत्साह में बुजुर्गों ने गांधी की जय के साथ, भारत के वृद्धों को सम्मान के साथ जीने लायक पेंशन देने के नारे लगा दिए। गांधी बाबा के आंगन में नारे की थोड़ी-सी आवाज सुनते ही वहां तैनात पुलिस वाले लाठियां लेकर दौड़ पड़े। अरुणा रॉय और कार्यकर्ता हतप्रभ रह गए। पुलिस ने उन्हें लाठियों से ठेला तो वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी रह चुकीं बेहद शालीन अरुणा रॉय तैनात पुलिस वालों से उलझ गईं। थोड़ी देर की गर्मागर्मी के बाद कार्यकर्ता जंतर-मंतर रवाना हो गए। यहां अरुणा रॉय की नाराजगी इसलिए जायज लगती है कि धार्मिक उपासना स्थलों अथवा गली-मोहल्लों, पार्कों में माइक व स्पीकर लगाकर 'जय जयकार' करते हुए सुख-समृद्धि मांगने वालों को कभी कोई पुलिसकर्मी डंडे से नहीं भगाता। राजघाट या शांति वन क्या किसी उपासना स्थल से कम है?

जंतर-मंतर पर भीषण गर्मी में अरुणा रॉय और उनके साथी कार्यकर्ता दिनभर धरने के बाद रात में भी साधारण दरी पर सोते रहे। देश के वृद्धजनों की समस्या पर इस रचनात्मक शांतिपूर्ण पहल पर कुछ मीडियाकर्मियों ने ही अधिक ध्यान दिया। शाम ढलने के बाद रोशनी कम होने पर एक टी.वी. चैनल के लिए अरुणा रॉय को जंतर-मंतर रोड पर ही एक बहुमंजिली इमारत के आंगन में बातचीत के लिए ले जाया गया। इतनी महत्वपूर्ण जगह पर यह रिहायशी कम दफ्तरी उपयोग वाली महंगी इमारत है। इसके आंगन में एक छोटी लाइट और कैमरे के समक्ष चार सवाल भी पूरे नहीं हुए थे कि बिल्डिंग के सुरक्षा गार्ड ने हंगामा कर दिया। बाहर धकेलने और कैमरा फेंक देने की धमकी दी गई। रखवाली के इंचार्ज को बताया भी गया कि इससे कोई डिस्टर्ब नहीं हो रहा लेकिन धनकुबेरों के प्रतिनिधि और निजी एजेंसियों के अक्खड़ गार्ड अरुणा रॉय और उनके सरोकार के बजाय पुलिस से अधिक दुर्व्यवहार के मूड में बने रहे। मतलब राजघाट का पब्लिक प्लेस हो या कौड़ियों के दाम पर धंधों के लिए बनी भव्य इमारतों के आंगन में समाज-देश की बात करना आसान नहीं है।

लोकतांत्रिक व्यवस्था में पब्लिक प्लेस को 'सुरक्षित क्षेत्र' बनाने की प्रवृत्ति सचमुच शर्मनाक है। दुनिया के किसी लोकतांत्रिक देश में महापुरुषों के स्मृति स्थल, सार्वजनिक पार्क आदि को सही अर्थों में जनता की उपयोगिता और सद्भावना के लिए रखा जाता है। वाशिंगटन में अब्राहम लिंकन की प्रतिमा की गोद में बैठकर अमेरिकी ही नहीं, विदेशी पर्यटक भी फोटो खिंचवाते हैं। लंदन का हाइड पार्क जन प्रदर्शनों के लिए विख्यात है। पेरिस या रोम के ऐतिहासिक केंद्रों या पार्कों में किसी तरह की रोक-टोक नहीं होती। यहां दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में पिछले साल चाय पीने के बाद सुप्रसिद्ध गायिका शुभा मुद्गल का छोटा टी.वी. इंटरव्यू वहीं लॉन में करने की कोशिश की तो तत्काल केयर टेकर पहुंच गए। नहीं, पेड़ों और फूलों के पास दो कुर्सी लगाकर कैमरे के सामने बैठकर बात करना वर्जित है। यों हर शाम उसी आंगन में किसी आयोजन पर चाय-पान या डिनर में ड्रिंक्स (शराब) के साथ मस्ती में बहस-हंसी-ठहाकों पर कोई रोक-टोक नहीं है। बहरहाल, हमने शुभा बहन से आग्रह किया कि चलिए सेंटर के पीछे लोदी गार्डन में बात कर लेते हैं। एक किनारे कैमरा लगाकर घास पर बैठकर बात शुरू ही की थी कि गार्डन के माली-रखवाले दौड़े आ गए। नहीं, यहां आप कैमरे के सामने बात नहीं कर सकते हैं। क्यों? यह सरकारी आदेश है। पहले भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग और संस्कृति मंत्रालय से लिखित आदेश लेकर आएं। सो, कैमरा और जुबान बंद। आप लंदन, टोक्यो, न्यूयॉर्क, पेरिस, बर्लिन, मास्को या बीजिंग में भी किसी पार्क में आराम से अपने कैमरे से ऐसी रिकॉर्डिंग कर सकते हैं। भारत से अंग्रेज 64 साल पहले चले गए लेकिन उनके नियम-कानून आम पब्लिक पर अब भी लागू हैं। लोदी गार्डन या नेहरू पार्क या हौजखास के पार्क में यों तो कुत्तों के लाने पर रोक की तख्तियां लगी होती हैं लेकिन बड़े अफसर, बड़े नेता, सेठ-दलाल, विदेशी राजनयिक या उनके नौकर इन पार्कों में खूंखार कुत्तों के साथ घूम सकते हैं। कई बार उन्हें खुला छोड़ दिया जाता है। एकाध बार मेरे जैसे डरपोक व्यक्ति ने कुत्ते को संभालने का आग्रह किया तो जवाब मिला कि चुपचाप भाग जाओ वरना सचमुच कुत्ते से बोटी-बोटी नुचवा दी जाएगी।

भारत सरकार ही नहीं, नगर-निगम या दिल्ली विकास प्राधिकरण के बदहाल पार्क तक में कड़े नियम-कानून हैं। वहां लोग 'अनुमति' लेकर नवरात्र जागरण के नाम पर कानफोड़ू स्पीकर लगाकर रात खराब कर सकते हैं लेकिन पिछली दीवाली पर हमने अपार्टमेंट की सोसाइटी के पदाधिकारियों को सुझाव दिया कि आतिशबाजी बिल्डिंग के अहाते के बजाय दीवार से सटे पार्क में करने दी जाए तो घर-गाड़ियां अधिक सुरक्षित रहेंगी। हमें बताया गया कि पार्क की देखभाल भले ही नहीं हो रही हो, वहां आतिशबाजी होने पर संबंधित निगम/प्राधिकरण और पुलिस हमें दंडित कर देगी। दिल्ली की यह कहानी आपको भारत के कई नगरों में मिलेगी। धार्मिक या जातीय आयोजनों के नाम पर पब्लिक प्लेस के उपयोग-दुरुपयोग पर कभी कार्रवाई नहीं होती लेकिन छोटे-छोटे समूहों की रचनात्मक गतिविधियों के लिए नियम-कानून आड़े आ जाते हैं। साधारण गांव-कस्बे का आदमी महानगरों के पार्क या स्मारकों में बड़ा दबा-सहमा रहता है। कहां कौन पुलिस वाला डंडा लेकर पहुंच जाए। प्रेमी-प्रेमिका की बात दूर रही, भाई-बहन भी किसी पार्क में बदमाश पहरेदार के हत्थे पड़ जाएं तो 'वसूली' या थाने ले जाने की नौबत आ जाती है। संसद के 60 वर्ष पूरे होने पर धूमधाम से समारोह हो रहे हैं लेकिन इस लोकतंत्र में साधारण नागरिक को सार्वजनिक स्थल पर अपनी बात कहने, गाने-बजाने, किसी भय के बिना दिन गुजारने की व्यवस्था क्यों नहीं लागू हो सकती? कानूनों में बड़े बदलाव की मांग करने वाले इस छोटी-सी पब्लिक सुविधा के लिए नियम-कानून क्यों नहीं बदलवाते? जरूरत सत्ता-व्यवस्था की मानसिकता बदलने की है।

alokmehta@nationalduniya.com